ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 213-214
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-IV, Issues-22, YEAR- Oct.-Dec.-2021

पुरुषोऽयम लोकसम्मित

डॉ0 कमलेश वर्मा

ऐसो0 प्रोफेसर ठाकुर बीरी सिंह महाविद्यालय, टूण्डला फिरोजाबाद (उ0प्र0) भारत

Received- 02 .12. 2021, Revised- 07 .12. 2021, Accepted - 11.12.2021 E-mail: drkamlesh7863@gmail-com

सारांश: *पुरुष शब्द से शरीर स्थ आत्मा का ग्रहण किया जाता है। "पुः. शरीरे. वसते. इति पुरुषः = शरीरस्थ आत्मा । इस पुरुष के कारण क्या हो सकते हैं? यह बात शास्त्रों मे स्पष्ट की गयी है, क्योंकि बिना कारणों के यह आत्मा शरीर में फँसने वाला नहीं है। अतः इसके कारण है– एकादश इन्द्रिया = अर्थात पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ. पाँच कर्मेन्द्रियाँ. ग्यारहवा मन = एकादश . ये सब इस आत्मा के बन्धन के कारण है। इन कारणों के कारण ही जड़ तत्वों में चेतनता का संचार करके क्रियाशील बनाकर शरीर को सम्पूर्ण कार्य व्यवहार के द्वारा चलाता है क्योंकि वह पुरुष है।*

कुंजीभूत शब्द– तकनीकी, प्रिंटमीडिया, रेडियो, टी.वी., इंटरनेट, सिनेमाहॉल, केबल टी.वी. कनेक्शन ।

पंचमहाभूत शरीरि समवायः पुरुषः सुश्रुत संहिता सूत्र अध्याय–4 पुरुष सूक्त में पुरुष को विराट स्वरुप मानकर समस्त जगत की उत्पत्ति का कारक माना है। ऋग्वेद संहिता– म–10 सूक्त ९० शरीर इन्द्रिया आत्मा और मन के समुदाय को पुरुष कहा जाता है। पंज महाभूत और आत्मा के संयोग का नाम ही पुरुष है। काश्यप संहिता पृष्ठ 45 मनुष्य षडधातु सम्प्रदाय स्वरूप है। जिन लिंगो से आत्मा का ज्ञान होता है वे सब इसी पुरुष के अर्न्तगत माने जाते हैं। भेल संहिता पृष्ठ 97 यथा–प्राण, अपान, निमेष, उन्मेष आदि जीवन, मन की गति, विभिन्न इन्द्रियों में मन का संचार होना, उनको प्रेरित करना, धारण करना, स्वप्न में देशान्तर गमन, स्वप्न में शुभाशुभ को प्राप्त करना, सुख–दुख इच्छा–व्देष, प्रयत्न चेतना, धृति, बुद्धि, स्मृति और अहंकार आदि। सत्वातमा शरीरंच त्रयेतत् त्रिदण्डवत्। लोकस्तिष्ठति संयोगात् तब सर्वे प्रतिष्ठितम् स प्रमाश्चेतनं तच्च तच्चाधिकरण स्मृतम् आयुर्वेद अ01 सू०–22 सत्व, आत्मा और शरीर ये तीनों त्रिदण्ड के समान है इनके संयोग से यह लोक स्थित है और इसी पर सब कुछ स्थित है। इस प्रकार से यही पुरुष, यही चेतन अथवा पुरुष यहाँ पर अधिकरण है।

पुरुष और जगत के विषय में पुरुषोऽयम लोक सम्मित इत्युवाच पुनः भगवान वसुरात्रेयः। यावन्तोहिलोके मुर्तिमन्तो भाव विशेषास्तावन्तः पुरुषे। यावन्तः पुरुषेतावन्तोलोके। अर्थात पुरुष लोक जगत के तुल्य है। यह बात भगवान पुनर्वशु आत्रेय ने कही है। (इस महान लोक का एक छोटा सा प्रतिरुप) इस लोक में जितने भी मुर्तिकार अर्थात साकार भाव हैं, उतने ही भाव इस पुरुष में विद्धमान है और जितने इस पुरुष उतने ही इस लोक में इस लोक में अवयव भेद असंख्य है पुरुष के भेद असंख्य है। उन सबका परिगणन कर सकना असंभव है। जिस प्रकार लोक में अश्विनी कुमारों को माना गया है. वही पुरुष के शरीर में कान्ति रहती है इस लोक में जो महद्गण माने जाते हैं वही पुरुष में उत्साह बनकर रहता है। जो लोक में विश्वदेव वे ही पुरुष के भीतर सब इन्द्रिया और सम्पूर्ण इन्द्रियों के अर्थ विषय माने जाते है। इस लोक में जो अन्धकार वही मानव शरीर में मोह बना हुआ है। इस लोक में ज्योति– मानव शरार में ज्ञान । जिस प्रकार जगत में सृष्टि का आरम्भ पुरूष का गर्भाधान कहलाता है। जिस प्रकार से एक काल का एक रुप सत्ययुग था, उसी तरह मानव शरीर में बचपन। जगत में त्रेता युग– मानव शरीर में वृद्धावस्था। जगत में कलयुग– मानव शरीर में रोग रहता है। जिस प्रकार से युग (एक युग) का अन्त– पुरुष की मृत्यू। इसी प्रकार से अग्निवेश। लोक (जगत) और पुरूष के अन्य अवयव भेद आदि हैं। उपनिषदों में लोक और पुरुष की समानता बताई गयी है।

उपनिषदों में लोक और पुरुष की समानता कही गयी है। पुरुषोऽयम् लोकोसम्मित निवृत्ति के उपाय निवृत्ति अपवर्ग है और सर्वोत्ष्ट है। उसे अत्यन्त शान्त माना जाता है तथा यह अविनाशी है वह ब्रहम है। इसी को मोक्ष कहते है। निवृत्ति चाहने वाले को ब्रहमज्ञानी का शिष्य बनकर अग्नि की सेवा धर्म शास्त्रों का अध्ययन, तप स्वध्याय, ईश्वर इत्यादि अनुंशीलन करते रहना चाहिए। सत्संगति, असत्पुरुषों का त्याग सत्यवद, सर्वजन हिताय, प्रियवचनम, मित भाषणम् सभी प्राणियों को आत्मवत् समझना चाहिए। स्त्रियों की संगत क् त्याग करना चाहिए। किसी भी सामान आदि का संग्रह नहीं करना चाहिए। कन्दमूल फल खाना, जमीन पर सोना, योगासन करना चाहिए। निद्रा, तन्द्रा आलस्य का त्याग करें। हानि–लाभ, जीवन–मरण, यश–अपयश, प्रिय–अप्रिय आदि में समवृद्धि का व्यवहार करें। काम, क्रोध से विचलित न हों। इन्द्रियों को मन में और मन को आत्मा में नियन्त्रित करते रहें। सभी प्रकार की प्रवृत्तियों को दुःख का मूल मानकर धैर्य, स्मृति, नियम–पालन में प्रयत्नशील रहें मन की शुद्धि रखने से मोक्ष का मार्ग प्रशस्त हो जाता है मानसिक शुद्धि से सत्य बुद्धि अर्थात ऋतभ नाम की प्रज्ञा प्राप्त होती है।

जीवन मुक्त होने के लिए गीता का यह ध्यान में रखना चाहिए। "सर्वधर्मान् परित्यज्यमामेकं शरणं ब्रज।" आत्मा अविनाशी आत्मा नित्य है जो वस्तु नित्य होती है, व ही अविनाशी कहलाती है अनादिः पुरुषोनित्यो विपरीतस्तुहेतुजः ।

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-IV, Issues-22, YEAR- Oct.-Dec.-2021

सदकारण व न्नित्यं दृष्टं हेतुजमन्यथा ।। (चरक0शा0अ0 1) आत्मा नित्य है क्योंकि वह अनादि पुरुष है। अतः आत्मा और परमात्मा दोनो ही नित्य है। केवल मात्र हेतु से उत्पन्न राशि पुरुष अनित्य है। अर्थात मोह, इच्छा, द्वेष आदि से उत्पन्न होनो वाला राशि पुरुष अनित्य है। सिद्धान्त यह हे कि जो द्रव्य सत् अर्थात सत्ता योगी है वह कारण से रहित नित्य होता है। और जो करण वाला होता है वह अनित्य। अनादि पुरुष सत्तावान तो है पर उसका कारण नहीं होने से वह नित्य है और इधर राशि पुरुष भी सत्तावान है किन्तु साथ ही कारण वाला भी है इसलिए अनित्य माना है .

तदेव भावादग्राहयं नित्यत्वं न कुतञ्चन । भावाज्ज्ञेय तदव्यक्तम चिन्तयं व्यक्तमन्यथा।। (चरक० शा० अ० 1–19) जो उत्पत्ति धर्म से रहित है वही नित्य होता है। जो उत्पत्ति धर्म है उसकी किसी हेतु से भी नित्यता नहीं हो सकती। जो नित्य पुरुष है वह अव्यक्त है। अतएव अचिंत्य है जो कि राशि पुरुष है वह अनित्य है अतः वह व्यक्त है और अचिन्त्य है। वह अव्यक्त आत्मा है और वह आत्मा क्षेत्रज्ञ है। अनादि और अनन्त है, व्यापक और अनिनाशी है ना सतो विधते भावो ना भावो विहति सतः (श्रीमद् भगवद्गीता–अ०श, श्लोक 19) असत् का भाव नहीं और सत् का अभाव कभी नहीं होता है। वह अविनाशी है।

अविनाशी तु ताद्विद्धियेन सर्वमिदं ततम। विनाशमिव्ययस्यास्य न काश्चित्कर्तुमर्हति।। (श्रीमद् भगवत् गीता अ० 2 श्लोक 16) जो इस सर्वत्र वस्तु जगत में व्याप्त है, वह आत्मा अविनाशी है। इस अव्यय आत्मा का कोई विनाश न हीं कर सकता है "अन्तवन्त इमेदेहा नित्यास्योक्ताः शरीरिणः । अनाशिनो प्रमेयस्य तस्याद् युध्यस्व भारत ।। (श्रीमद् भगवत् गीता अ० 2 श्लोक 18) इस नित्य शरीरी (आत्मा के) सारे शरीर अन्त हो जाने वाले है क्योंकि आत्मा अविनाशी और अप्रमेय है, अतः तुम्हें युद्ध करना चाहिए। कृष्णः उवाच नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि, नैनं दहति पावकः न चौन क्लेदयन्त्याणे न शोषयति मारुतः। अच्छेदयोयम दाहयो यम क्लधोडशोष्य एव च नित्यः सर्वगतः स्थाणुश्चोडयं सनातनः।। (श्रीमद् भगवत् गीता अ० 2 श्लोक 22,24) इस आत्मा को शस्त्र काट नहीं सकता, अग्नि जला नहीं सकती, पानी भिगो अतः वह नित्य है। सर्वत्र व्याप्त है, स्थाणु हैं, अचल है, सनातन है च कथ्यते वेदा विनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम। कथं सः पुरुषः पार्थः के घातय ते हन्तिकम।। (श्रीमद् भगवत् गीता अ० 2 श्लोक 21) हे पार्थ! जो इस अविनाशी नित्य आज (कभी न उत्पन्न होने वाला) और अव्यय जानता है वह मनुष्य कैसे किसी को मार सकता है? और कैसे किसी के द्वारा मारा जा सकता है? अतः आत्मा अजर, अमर और अविनाशी है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. चरक संहिता, चरक ऋषि शा०अ०–1,5,19.
2. सुश्रुत संहिता, सुश्रुत ऋषि सू०–अ०–1.
3. श्रीमद् भगवत् गीता, गीता प्रेस गोरखपुर 263005 अध्याय–2 श्लोक 16,17,18,21,22,23).
4. काश्यय संहिता, काश्यप ऋषि– पृष्ठ 45.
5. आयुर्वेद – अ०1 सू० 22.
6. ऋग्वेद संहिता – म०10,सूक्त–90.
7. भेल संहिता – महर्षि भेल – पृष्ठ 96.

*****